International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 18-07-2021, Accepted: 02-08-2021, Published: 18-08-2021
Volume 7; Issue 4; 2021; Page No. 91-95

मोहन राकेश के व्यक्तित्व में विसंगतियाँ

डॉ. अरविंद कुमार
पी.जी.टी. हिंदी संस्थान, विद्याज्ञान स्कूल बुलंदशहर, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
इस शोध पत्र में मोहन राकेश के व्यक्तित्व में विसंगतियों पर प्रकाश डाला गया है। सामाजिक प्राणी होने के कारण मनुष्य पर सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ना अवश्यंभावी है। मनुष्य परिस्थितियों का दास बनकर विसंगत जीवन जीने के लिए विवश है। मोहन राकेश के विसंगति युक्त व्यक्तित्व का प्रभाव उनके साहित्य पर भी पड़ा है। प्राय: देखा गया है कि किसी भी साहित्यकार के जीवन की सम-विषम परिस्थितियों की छाया उसके साहित्य पर अवश्य पड़ती है। मोहन राकेश को विपन्न आर्थिक स्थिति विरासत में मिली थी। पिता की मृत्यु के समय माता की सोने की चूड़ियाँ बेचकर मकान मालिक का कर्ज़ चुकाना समाज की संवेदनहीनता को दर्शाता है। संभवत: इसी घटना ने मोहन राकेश के जीवन-जीने के दृष्टिकोण को परिवर्तित कर दिया। मोहन राकेश के व्यक्तित्व पर सबसे अधिक प्रभाव उनकी माता जी का पड़ा। आर्थिक विवशता के कारण मृत्युशैय्या पर पड़ी प्रेमिका से मिलने न जा पाना, समय-समय पर अभिन्न मित्रों द्वारा छले जाने के कारण उनका कुंठा, अविश्वास से परिपूर्ण व्यक्तित्व दिखाई पड़ता है। मोहन राकेश की घर बनाने की चाहत जीवन भर अधूरी रही। आधुनिक नाटकों का मसीहा कहा जाने वाला, नयी कहानी आंदोलन का मुख्य सूत्रधार, अपने जीवन में बरबस आई विसंगतियों से आत्मसात करता हुआ साहित्य सृजन करता रहा। आधुनिक युग में किसी आदर्श की कल्पना करना असंगत होगा। मोहन राकेश का साहित्य यथार्थवादी साहित्य है। यथार्थ को व्यक्ति स्वयं भोगता है। मोहन राकेश ने अपने निज जीवन में भोगे हुए यथार्थ को साहित्य में अभिव्यक्ति दी है। दूसरों की समस्याओं को चुटकी में हल करने वाला राकेश अपनी व्यक्तिगत समस्याओं से पार न पा सका।

मूल शब्द: व्यक्तित्व में विसंगतियाँ, आर्थिक स्थिति, विभाजन विभीषिका, सनातनी परिवेश, अहंवादी, मानसिक तनाव, कुंठा

प्रस्तावना

मोहन राकेश का जन्म 8 जनवरी 1925 ई. को अमृतसर की चंडी वाली गली में हुआ। राकेश के दादा जी ने दो शादियाँ की थी तथा उनके पिता जी व ताया जी सौतेले भाई थे। राकेश के दादा मृत्यु के समय एक पुश्तैनी दुकान और कुछ पुराना कर्ज़ छोड़ गए। परिवार में तायाजी बड़े सदस्य होने के कारण दोनों दायित्वों का निर्वाह करने लगे। राकेश की दादी को सदैव यह शंका रहती कि ताया जी दुकान की आमदनी को स्वयं ही खा रहे हैं और घर की ज़रूरतों को पूरा नहीं कर रहे हैं। इन सब कारणों ने मोहन राकेश के घर का वातावरण तनावपूर्ण व विषाक्त बना दिया। जिसका प्रभाव राकेश पर पड़ना अवश्यंभावी था। चंडी वाली गली का वह दो मंज़िला मकान जो सीलन और अँधेरे से भरा रहता था, यही राकेश के सपनों का संसार था। मोहन राकेश की दादी अत्यधिक शंकालु और क्रोधी प्रवृत्ति की थी। दादी के अंधविश्वास राकेश के लिए भयावह संसार रचते थे। दादी के संदेह की परिधि में राकेश की सबसे अच्छी सहेलियाँ फूलकौर और बालकौर भी आ जाती। दादी माँ की बदबूदार धोती की गंध मोहन राकेश के मन में वितृष्णा का भाव उत्पन्न करती थी। राकेश की विवशता यही थी कि दादी माँ का आँचल उसके लिए सबसे सुरक्षित कोना था।

मोहन राकेश के पिता कर्मचन्द गुगलानी पेशे से वकील तथा प्रकृति से साहित्यिक व्यक्ति थे। राकेश ने पिता की मृत्यु का मार्मिक चित्र खींचते हुए लिखा है- "8 फरवरी सन् 1941 को अमृतसर के एक प्रतिष्ठित नागरिक का देहांत हुआ। वह एक जागरूक कार्यकर्ता तथा कई एक साहित्यिक और सांस्कृतिक संस्थाओं के पदाधिकारी थे।" इसी प्रतिष्ठित व्यक्ति पर कई महीने का किराया बाकी था और मकान मालिक किराया लिए बिना मुर्दा न उठने की धमकी दे रहा था। मृतक की विधवा की सोने की चूड़ियाँ बेचकर कर्ज़ चुकाया गया। सोलह वर्षीय मदन के लिए यह एक हृदय विदारक घटना थी। मोहन राकेश को साहित्यिक संस्कार और कलात्मक रुचि के साथ-साथ ऋण-ग्रस्तता भी विरासत में मिली थी। पंडित लोकनाथ और निहाल सिंह के साथ-साथ बुक कंपनी वालों का कर्ज़ भी उन पर चढ़ा था। दादीमाँ के कर्ज़दार अलग से परेशान करते थे। आर्थिक अभावों ने

राकेश के मन में वितृष्णा तथा विद्रोह की भावना उत्पन्न की, जिससे उनका जीवन 'विसंगतियुक्त' हो गया। राकेश के घर का वातावरण कट्टर सनातनी परिवेश से प्रभावित था, घर पर पूजा-पाठ के साथ शाकाहारी भोजन बनता था। राकेश के पिता ने 'ब्रह्म संबंध' अपना लिया था, जिसका प्रभाव शीघ्र ही उनके स्वास्थ्य पर दिखाई देने लगा। घर में नमस्ते करना वर्जित था इसके स्थान पर 'जय श्रीकृष्ण' कहकर संबोधित किया जाता था। घर के इस वातावरण ने राकेश को विद्रोही बनाया। माँस-मदिरा का सेवन कर वह स्वयं को सनातनी परिवेश से मुक्त करना चाहते थे।

माँ के प्रति राकेश का प्यार अपार था। पिता की मृत्यु के पश्चात सोलह वर्ष की उम्र में परिवार का बोझ उठाने का संकल्प उन्होंने माँ के सम्मुख किया। राकेश के जीवन में उनकी माँ का गहरा प्रभाव रहा है। यही कारण है कि स्त्रियों के प्रति उनका दृष्टिकोण पूर्णरूपेण विकृत नहीं हो पाया है। मोहन राकेश माँ का बिछोह सहन नहीं कर पाए। माँ की मृत्यु 16 अगस्त 1972 को हुई और उसके कुछ माह बाद ही राकेश का 3 दिसंबर 1972 को अप्रत्याशित रूप से प्राणांत हो गया। राकेश के जीवन में एक माँ ही ऐसी थी जो उनके हर सुख-दु:ख में साथ रही। मोहन राकेश अपनी डायरी में माँ के प्रति भी अपनी स्वार्थपरता का परिचय देते हुए लिखते हैं –"अम्मां के टांग के दर्द की वजह से बहुत चिंतित रहा हूँ, आज कई महीने होने को आए। यह दर्द ठीक नहीं होता। डाक्टर मेहता ने आज तीसरी बार दवाई बदली है। अम्मा की अस्वस्थता से तो भैया अपनी गाड़ी ही रुक जाएगी।" परंतु माँ के प्रति राकेश कह उठते-"सच, मेरी माँ बहुत-बहुत बड़ी है- बहुत बड़ी। काश! कि मुझमें माँ के गुणों का शतांश भी होता।"

राकेश को दमघोटू आर्थिक स्थिति विरासत में मिली। राकेश के पिता जब दिवंगत हुए उस समय राकेश की आयु सोलह वर्ष थी, इसलिए राकेश से कुछ ही वर्ष बड़ी बहन ने स्कूल में नौकरी कर घर का खर्च चलाया। राकेश अपनी आर्थिक स्थिति के बारे में डायरी में एक स्थान पर लिखते हैं-"बहुत बार तंगी आई है पिता जी की मृत्यु के बाद तो बहुत ही बुरे दिन देखे थे। फिर बीच में मैंने दो-तीन बार बेकारी काटी। फिर भी माँ थोड़े से थोड़े साधनों से भी वही रोटी मेरे थाली में मुझे देती रही। कटौतियाँ बहुत होती थी मगर पहले अपने शरीर और पेट पर, फिर बहन के कपड़ों और खाने, फिर छोटे भाई पर, लेकिन मुझ पर नहीं।" मोहन राकेश की आरंभिक शिक्षा अमृतसर में हुई तथा उच्चतर शिक्षा ओरिण्टल कॉलेज लाहौर में हुई। जिस वर्ष उनके पिता दिवंगत हुए उसी वर्ष राकेश ने संस्कृत में शास्त्री की परीक्षा उत्तीर्ण की, तदुपरांत अंग्रेज़ी लेकर बी. ए. किया। छात्रावस्था में राकेश ट्यूशन करके खर्च चलाते थे परंतु एम. ए. के अंतिम वर्ष में आय के समस्त स्रोत बंद हो जाने के कारण पढ़ाई छोड़कर नौकरी की तलाश करने लगे। राकेश के कॉलेज प्राचार्य डॉ. लक्ष्मण स्वरूप जी ने अपने मेधावी छात्र की आर्थिक स्थिति को देखते हुए उन्हें 'फैलोशिप' प्रदान की। जिसकी परिणति के रूप में राकेश ने एम. ए. संस्कृत में 'स्वर्ण पदक' प्राप्त किया। राकेश की प्रतिभा को देखते हुए उन्हें दो वर्ष की 'शोधवृत्ति' भी दी गई। राकेश ने एम. ए. करने के उपरांत लाहौर में सन् 1945 में एक फ़िल्म कंपनी में कहानीकार के रूप में कार्य किया परंतु राकेश के जीवन का प्रथम उद्देश्य लेखन था, न कि आजीविका। एक बार ऐसी विषम परिस्थिति आने पर उन्होंने तुरंत निर्णय लिया-"मैं अपने जीवन के लाभों को भविष्य की सुनहरी आशाओं की वेदी पर न्योछावर नहीं कर सकता, मेरे विचार से, मेरे अलग हो जाने से आपको एक अच्छा कहानीकार चाहने मात्र से मिल जाएगा।"कितनी हास्यास्पद स्थिति है कि आर्थिक स्थिति ठीक न होते हुए भी नौकरी से त्यागपत्र दे दिया।

मोहन राकेश विभाजन उपरांत जालंधर आए और हिंदी में एम. ए. प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया। सन् 1947 में देश का विभाजन हुआ। विभाजन-विभीषिका से त्रस्त राकेश लाहौर से पलायन कर दिल्ली होता हुआ बंबई पहुंचा। यह विभाजन-विभीषिका सन् 1941 में अपने घर में देखे हुए विरूप से कहीं बड़ी और नृशंस थी। विस्फोट, अग्निकांड, हत्या, लूटपाट और पाशविक बलात्कार ने सभी मानवीय मूल्यों को ध्वस्त कर दिया। जिसके परिणामस्वरूप राकेश को बेकरी की विवशता काफी दिनों तक सहन करनी पड़ी। 'गर्दिश के दिन' में राकेश ने अपनी बेकारी के बंबई प्रवास के दिनों का वर्णन किया है-"वह कई महीने बेकार रहा, भूखा रहा, फुटपाथ पर सोया, इस बीच उसे शिमला से एक पत्र मिला, पत्र उसी का था जिसके साथ सूत्र में बंधकर उसने जीवन बिताने का निश्चय कर रखा था, उसने लिखा था कि वह दो एक सप्ताह के लिए ही वहाँ आई है, उसे बुलाया गया।" परंतु राकेश की आर्थिक स्थिति शोचनीय थी- "मदन के पास शिमला पहुँचने के लिए किराए के पैसे नहीं थे, उधार की व्यवस्था भी वह नहीं कर सकता था, वह नहीं जा सका, अपनी असली विवशता को छिपाकर उसने पत्र में और-और बातें लिख दी, उस पत्र का उत्तर नहीं आया, उसके बाद भी उसने कितने ही पत्र लिखे परंतु उनका भी उत्तर नहीं आया, कुछ दिनों बाद सूचना मिली कि वह न जाने किस रोग से चल बसी है।" राकेश ने जीवन में बहुत कुछ सहा है- विस्थापित होने का दु:ख, बेकारी तथा दिव्य की मौत ने उन्हें मानसिक आघात पहुंचाया।

सन् 1949 में बंबई के एल्फ़िस्टन कॉलेज में लेक्चररशिप मिली, तुरंत आँखों की कमजोरी के कारण हटा दिए गए। बंबई में असफल होने के पश्चात राकेश फिर जालंधर आए। जालंधर के डी. ए. वी. कॉलेज में लेक्चररशिप की। टीचर्स यूनियन में सक्रिय भाग लेने के कारण बिना कंफ़र्म किए 1950 में हटा दिया गया। तदुपरांत राकेश ने शिमला के 'बिशप काटन स्कूल' में अध्यापन कार्य करने लगे। इसी मध्य दिनांक 10-12-1950 को सुशीला के साथ विवाह बंधन में बंधे। राकेश यह चाहते थे कि यह विववाह सादगी से सम्पन्न हो परंतु कन्या के पिता ने उनके इस आग्रह को अस्वीकार कर धूमधाम से शादी की। राकेश के मन पर इसका दुष्प्रभाव हुआ। राकेश ने सुशीला का चयन एक कमाऊ पत्नी तथा अपने दोस्त ज्ञान के प्रभाव में आकर किया परंतु राकेश का यह प्रयोग असफल रहा- "जिस औरत से मैं प्यार नहीं कर सकता, उसके साथ मैं ज़िंदगी

किस प्रकार काट सकता हूँ? आज वह मुझ पर वासना से चालित और इंसानियत से गिरा हुआ होने का आरोप लगाती है, क्योंकि मैंने उससे तलाक चाहा है, क्योंकि मैं अपने अभाव की पूर्ति के लिए एक ऐसे व्यक्ति का आश्रय चाहता हूँ जो मुझे खींच सकता है, बांधकर रख सकता है।" नवनीत का जन्म भी राकेश और सुशीला के मध्य अनुराग न उत्पन्न कर सका। अंतत: 12-08-1957 ई. को राकेश और सुशीला का विवाह-विच्छेद हो जाता है। विवाह-विच्छेद ने राकेश का जीवन तनाव-ग्रस्त कर दिया, जिसके कारण डी. ए. वी. कॉलेज जालंधर के हिंदी विभागाध्यक्ष से भी 31-12-1957 को त्याग-पत्र दे दिया। राकेश के जीवन की यह सबसे लंबी अवधि की नौकरी थी।

मोहन राकेश ने 1960 ई. में दिल्ली विश्वविद्यालय में लेक्चररशिप आरंभ की परंतु राकेश जो स्वतंत्र जीवन तथा लेखन के आदि हो चुके थे उन्हें परतंत्रता रास नहीं आई। 1962 ई. में सारिका का संपादन कार्य संभाला परंतु एक वर्ष पूरा होने से पहले ही राकेश ने त्यागपत्र दे दिया, यह राकेश के जीवन का अंतिम त्यागपत्र था। मोहन राकेश ने त्यागपत्र सदा अपनी जेब में रखा, किसी भी नौकरी में वे नहीं टिक पाए। कहीं उनका अहं सामने आया तो कहीं उनकी महत्वाकांक्षा। राकेश ने दूसरा विवाह पुष्पा जी के साथ 9 मई 1960 में किया परंतु राकेश का यह प्रयोग भी असफल रहा, कारण पुष्पा अर्धविक्षिप्त थी। राकेश दूसरी पत्नी से तलाक के कारण का विश्लेषण करते हुए लिखते हैं- "शादी का दूसरा प्रयोग पीठ पर छुरा घोंसा गया जो मृत्युप्रेरक कम किंतु आघातजनक अधिक था। पहली औरत शिक्षित और बुद्धिशाली थी परंतु उसमें वाणी और व्यवहार की ऋजुता की न्यूनता थी। दूसरी औरत न शिक्षित थी न बुद्धिशाली और पंजाब के छोटे से कस्बे की निम्न मध्यवर्गीय संकीर्णता को लिए हुए थी। एक ने मुझे रेत और पाषाणों की अनुभूति कराई, दूसरी औरत ने मूर्खता और गंदे नाले की।" पुष्पा ने राकेश को हर स्थान पर अपमानित किया। 'सारिका' कार्यालय में झगड़ा, राकेश के पीछे अपने भाइयों द्वारा गुंडे लगवाना आदि शर्मनाक कृत्यों ने अंतत: राकेश और पुष्पा को 1962 ई. में अलग किया। एक और ज़िंदगी जीने की चाह ने राकेश का व्यक्तित्व विघटित कर उसे दमघोटू आर्थिक स्थिति, मानसिक तनाव, अकेलापन व बदनामी के अतिरिक्त कुछ नहीं दिया।

मोहन राकेश ने तीसरा विवाह अपरिपक्व अनीता औलक से किया जो राकेश के लेखन से अत्यधिक प्रभावित थी। 23 जुलाई 1963 को एक-दूसरे को माला पहनकर राकेश का घर का स्वप्न पूरा हुआ। राकेश अनीता के प्रति भी आशंकित रहते थे कि कहीं वह भी उन्हें छोड़कर न चली जाए तभी तो वह कह उठते हैं- "तुम तो मुझे छोड़कर नहीं जाओगी न कभी।" डॉ. गोविंद चातक ने राकेश के लिए ठीक ही कहा है- कपड़े बदलने की तरह उन्होंने बीवियाँ बदली, घर उन्हें डराता रहा और रेस्तराओं, डाकबंगलों की ज़िंदगी ही रास आती रही। राकेश ने शोषण व दमनकारी नीति का विरोध किया। सन् 1964 ई. के पश्चात राकेश ने स्वतंत्र लेखन द्वारा आजीविका कमाने का प्रयास किया। सन् 1970 ई. में "नाटक में सही शब्द की खोज" के संदर्भ में शोध विषय पर 'नेहरू फैलोशिप' प्रदान की गई। इसी संदर्भ में सन् 1971 ई. में उन्होंने यूरोप के अनेक नगरों- जिनेवा, मॉस्को, वियना, प्राग, म्यूनिख़, पेरिस, लंदन, पूर्वी तथा पश्चिम बर्लिन, कोपेनहेग, तथा हेलसिंकी आदि नगरों के थिएटरों व रंगमंचों का अध्ययन किया। सन् 1971 में वे फ़िल्म वित्त निगम के सदस्य भी बनाए गए। जिससे त्याग-पत्र देने की बात भी राकेश के मन में सदा उठती रहती थी। राकेश के जीवन की विडंबना कहिए या उनके जीवन की विषम परिस्थितियों ने उन्हें कहीं भी रुककर एक स्थान पर कार्य करने नहीं दिया। राकेश के अंदर एक छटपटाहट रही, जिससे मुक्त होने की चाह में वे एक यायावर की तरह सदैव भटकते रहे। डॉ. गोविंद चातक के अनुसार- "राकेश कहीं भी स्थिर नहीं रहे, दिल्ली, जालंधर, अमृतसर, शिमला और बंबई कहीं भी नहीं। बंधे वे कभी भी न रहे- न व्यक्तियों से, जगहों से न नौकरियों से।"

राकेश का व्यक्तित्व बहुत उलझा हुआ प्रतीत होता है, कहीं पर वह कोमल हृदय प्रकृति प्रेमी बन जाते हैं, कहीं लड़कियों से फ़्लर्ट करने वाला, दोस्तों के साथ बीयर, कॉफी हाउस व सिनेमा में समय व्यतीत करने वाला व परिवेश से अलग रहकर जीने वाला। राकेश का जीवन अधिकतर 'अकेलेपन' से प्रभावित रहा। जिस कारण उनकी इच्छाएँ दमित हुई। दमित इच्छाओं के कारण राकेश कुंठाग्रस्त व तनावग्रस्त रहे। राकेश का अधिकांश समय नारी सौंदर्य के सामीप्य में व्यतीत हुआ, अनेक से यौन संबंध बनाए व प्यार के वादे किए। कुंठित मनोवृत्ति वाले राकेश प्रत्येक लड़की व नारी में अपनी कामतृप्ति खोजते हैं। मोहन राकेश ने अपनी डायरी में अनेक लड़कियों के साथ संबंधों को स्वीकार किया है- "वह लड़की जो कुछ ही दिन पहले तक इतने मुखर संकेत किया करती थी, जिसने सर्दी की रात में एक बजे तक मुझे अपने घर में रोके रखा था, और जिसने इतनी चाह के साथ मुझसे शरीर का प्यार लिया था, मुझे अपना 'फ़र्स्ट एक्सपीरियंस' कहा था, वह इस तरह अपरिचित सी, जैसे बिना देखे पास से चली गई।" मोहन राकेश के पड़ोसी उनके यहाँ लड़कियों के आवागमन को देखकर विस्मय में रहते कि यहाँ इतनी लड़कियाँ क्यों आती हैं? वीणा को राकेश ने अपना दोस्त, प्यार सब कुछ माना है- "जब भी मन उखड़ने लगता है चाह होती है वीणा को एक पत्र लिख दें। उसे बुरा लगे या अच्छा, लिख दें। सच में उसकी आत्मीयता किस तरह छा लेती है? कैसे मानूँ कि वह मेरे लिए पराई है और किसी और के लिए अपनी।"

राकेश के जीवन में मित्रों का स्थान प्रथम था। उन्होंने अनेक मित्र बनाए, कुछ मित्रों ने उन्हें मानसिक आघात पहुँचाया। 'ज्ञान' राकेश के अभिन्न मित्र थे, किसी कारण मतभेद हो जाने के कारण जीवनपर्यंत दु:खी रहे। मूर्धन्य साहित्यकार राजेंद्र यादव राकेश के मित्रों में सम्मिलित थे, राजेंद्र यादव ने राकेश को सदैव मानसिक आघात पहुँचाया- "दिल्ली में रहकर जिस व्यक्ति को सबसे ज़्यादा पहचाना है, वह है- राजेंद्र यादव। यह तो कहना शायद ठीक न हो कि वह मूलत: ही घटिया आदमी है- उसमें अच्छाइयाँ भी हैं

नि:संदेह, मगर वह इंफीरियरिटी कांपलेक्स से ग्रस्त है। उसी वजह से शायद उसमें इतनी ईर्ष्या की भावना है। वह हमेशा ऐसी ही बात करेगा जिससे तुम्हें चोट लगे, दु:ख पहुँचे।"

प्रसिद्ध साहित्यकार और राकेश के कभी मित्र रहे राजेंद्र यादव अपने और मोहन राकेश के संबंधों में आई कटुता को बताते हैं- "एक दिन मिलने गया तो अचानक ही सुना कि राकेश जी वापस जालंधर चले गए हैं, कल शाम तक ऐसी कोई बात नहीं थी, शीला जी रोते हुए उसके झटकेदार व्यवहारों की शिकायत कर रही थी, और मेरी सहानुभूति उनके साथ थी, पत्नी बच्चे को छोड़कर आप गौतम बुद्ध बनाने चले जाएँ- वह युग आज नहीं है- जैसा ही कुछ कहकर मैंने उसकी भर्त्सना की थी, राकेश को लिखा भी था, तभी से शायद यह गांठ हमारे संबंधों के बीच आ गई कि मैं हमेशा उसे ही गलती पर पाता हूँ, उसने नाराज़ होकर मुझे लिखा भी कि जब मैं पति-पत्नी के बीच रिश्ते की नज़ाकत नहीं समझता तो कुछ बोलना नहीं चाहिए, बात सही थी तब तक न मेरे शादी हुई थी न मैं आपसी रिश्तों की जटिलताओं से परिचित था।" शायद तभी से राजेंद्र यादव और मोहन राकेश के संबंधों में कटुता प्रारंभ हुई।

मोहन राकेश के घर के बारे में राजेंद्र यादव कहते हैं- "घर को लेकर राकेश भी उतना ही अनरियलिस्टिक(हवाई) रहा, जब-जब उसने घर बनाए, तब वह उनमें नहीं रहा, शायद वे उसके सपनों के घर नहीं थे, वे बार-बार उन दूसरों से टकराते थे जिनके साथ उसे घर बनाने थे, दूसरे हों, मगर उसकी शर्तों पर हों- उसकी इच्छानुसार उपस्थित-अनुपस्थित रहे, मेरी जानकारी में यह शर्त सिर्फ़ उसकी सौम्य और शब्द संकोची माँ ने ही पूरी की, वे उसकी ऐसी 'सुविधा' या आश्वस्ति थी जो बेटे की खुशी में ही जीवन की सार्थकता मानती थी।" यह राकेश का अहं ही था कि उन्होंने अपने सामने किसी को कुछ समझा ही नहीं।

राकेश की मित्रता का सिद्धांत था सौ प्रतिशत लेना व सौ प्रतिशत देना। इस कारण उनके मित्र उन्हें पूर्ण व्यवसायी मानते थे। राकेश के अभिन्न मित्रों में राज बेदी, कृष्ण चंदर, इंद्रनाथ मदान, जवाहर चौधरी, गिरधारी वैद, ओंप्रकाश, ओम शिवपुरी, सुधा शिवपुरी, उपेंद्रनाथ अश्क, राजेंद्र अवस्थी, मन्नू भंडारी, राजेंद्र यादव तथा कमलेश्वर आदि। कमलेश्वर मोहन राकेश के साथ अंत तक जुड़े रहे। कृष्ण चंदर राकेश के दु:खों के बारे में कहते हैं- "दु:खों की पूरी गिनती उनके पास थी, लेकिन उन दु:खों के बावजूद जिस आदमी की आँखें इस कदर खुली, बेबाक और हँसती हुई हों, उसका हृदय कितना विशाल होगा।" राकेश ने अपने जीवन में दु:खों को स्वयं ही निमंत्रण दिया है। अच्छी भली नौकरियों को छोड़कर बेकारी को ग्रहण करना रहा हो या एक सुशिक्षित पत्नी को छोड़कर अर्ध विक्षिप्त को अपनाना रहा हो।

कमलेश्वर राकेश के अव्यवस्थित व्यक्तित्व की पहचान देते हुए लिखते हैं- "अगर कहीं एक ऐसा शख्स दिखाई पड़े, जो सिल्क की निहायत लंबे कालरवाली कमीज़ पहने हो, जिसके कफ कोट की बाहों से छह अंगुल बाहर निकले हों और एकदम पुरानी चाल के कफ-बटन हो, जिसकी टाई की गाँठ ढीली मुट्ठी की तरह गर्दन में बेतरतीबी से कसी हों, कीमती कपड़े की पेंट जिस पहनने वाले से पनाह माँग रही हो।" कमलेश्वर राकेश की बदहाली का ज़िक्र करते हैं- "मैं चुप ही था क्योंकि उसका अहं कभी भी यह बर्दाश्त न करता कि उससे उसकी तकलीफ़ों के बारे में कुछ भी पूछा जाए। फिर कुछ क्षणों बाद वह खुद ही फूट पड़ा था, कमलेश्वर स्थिति यह थी कि मैं आत्महत्या कर लेता। चार महीने से माँग-माँग कर कपड़े पहन रहा हूँ। सचमुच मैं जान दे देता।" राजेंद्र यादव व्यक्ति राकेश के बारे में बताते हैं- "अगर महत्वाकांक्षाएँ और प्रतिस्पर्धाएँ बीच में न आएँ तो सचमुच राकेश बहुत खूबसूरत दोस्त था, दूसरे की बातों, जटिलताओं और समस्याओं की साफ समझ, उन्हें हल करने की सबसे अच्छी सलाह राकेश जैसी शायद ही किसी के पास हो, बेहद जीवंत और आत्मीय कंपनी, मगर ठीक उन्हीं समस्याओं में खुद इतनी गुत्थियाँ पैदा कर लेता था कि भागते ही बनता था।"

निष्कर्ष

मोहन राकेश के व्यक्तित्व में अनेक विसंगतियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। राकेश के जीवन की विडंबना यही थी कि वह मध्यवर्ग में उत्पन्न हुए, पिता की असामयिक मृत्यु व विरासत में मिली ऋण ग्रस्तता तथा विभाजन से उत्पन्न विभीषिका ने उन्हें विस्थापित किया, जिसका दर्द राकेश जीवनपर्यंत महसूस करते हुए संघर्षरत रहे। सनातनी परिवेश से छुटकारा पाने की कोशिश में मोहन राकेश ने 'आधुनिक' व 'पाश्चात्य' मूल्यों को अपनाया, इसीलिए राकेश मांस-मदिरा व नारी के प्रति आकृष्ट थे। राकेश ने जीवन में अनेक लड़कियों से यौन संबंध तथा प्रेम संबंध बनाए। राकेश के सनातनी परिवार में 'अंडा' तक खाना वर्जित था वहाँ राकेश मांस व सिगरेट चबा कर खाते थे। अहंवादी राकेश नौकरी में कहीं भी समझौता नहीं कर पाए। 'बेकारी' के कारण आर्थिक स्थिति सदैव शोचनीय रही। 'बेकारी' व 'अकेलापन' राकेश के साथ सदैव रहा। उधार की ज़िंदगी जीने वाला व किराए के मकान में रहने वाला राकेश समान लिए एक मकान से दूसरे मकान, एक नगर से दूसरे नगर तक उठाए फिरता रहा।

बार-बार घर बनाने की चाहत ने मोहन राकेश के व्यक्तित्व को विघटित किया। प्रथम पत्नी 'सुशीला' व द्वितीय पत्नी 'सुषमा' भी राकेश की घर की इच्छा पूरी न कर सकी, परिणामस्वरूप राकेश को अकेलेपन व मानसिक तनाव से आत्मसात करना पड़ा। तीसरी पत्नी 'अनीता औलक' ने राकेश की सही अर्थ में घर की इच्छा पूर्ण की परंतु राकेश अनीता से पूरी तरह संतुष्ट नहीं थे, कारण – अनीता का अपरिपक्व होना। जिसका वर्णन राकेश ने डायरी में किया है। 'एक और ज़िंदगी' जीने की चाह में राकेश बार-बार छला गया। राकेश को जीवन में दो ही व्यक्तियों से पूर्ण रूप से संतुष्टि मिली। प्रथम -उनकी अम्मा का उनके जीवन में महत्वपूर्ण योगदान रहा, इसीलिए अम्मा की मृत्यु के चार माह पश्चात ही 'मोहन राकेश' का देहावसान हो गया।

द्वितीय- उनकी प्रेमिका वीणा, जिसे राकेश ने अपना सब कुछ माना है। जो उनकी प्रेरणा रही है।
मोहन राकेश के व्यक्तित्व में 'सैक्स कुंठा' के कारण अनेक विसंगतियाँ उत्पन्न हुई हैं। यदि हम एक मनोचिकित्सक की दृष्टि से देखें तो इसमें राकेश का कोई दोष नहीं है। जिस प्रकार भूख व्यक्ति रोटी पर झपटता है, ठीक वही दशा 'अकेलेपन' के कारण मोहन राकेश की रही है क्योंकि दमित इच्छाएँ कभी भी उग्र रूप धारण कर लेती हैं। मोहन राकेश जैसा व्यक्ति जो समाज से कटा हुआ, स्वयं से नाराज़ व उधर की ज़िंदगी जीता हुआ हो उसके लिए 'नैतिकता' की कोई परिभाषा नहीं है। राकेश को मानसिक तनाव झेलने तथा 'व्यक्तित्व विघटित' करने में राकेश के मित्रों ज्ञान, राजेंद्र यादव तथा रमेशपाल का भी योगदान रहा है।

संदर्भ

1. सं. कमलेश्वर - सारिका {मोहन राकेश : गर्दिश के दिन –} फरवरी 1973 – पृष्ठ- 21
2. मोहन राकेश की डायरी: पृष्ठ- 55
3. मोहन राकेश की डायरी: पृष्ठ- 58
4. मोहन राकेश की डायरी: पृष्ठ- 202
5. मोहन राकेश की डायरी: पृष्ठ- 35
6. मोहन राकेश की डायरी: पृष्ठ- 230
7. सं. कमलेश्वर - सारिका {मोहन राकेश : गर्दिश के दिन –} फरवरी 1973 – पृष्ठ- 21
8. सं. कमलेश्वर – सारिका (वहीं) – पृष्ठ-21
9. डॉ. गोविंद चातक: आधुनिक नाटक का मसीहा – पृष्ठ-26
10. डॉ. गोविंद चातक: (वहीं) – पृष्ठ-26
11. मोहन राकेश की डायरी: पृष्ठ- 192
12. मोहन राकेश की डायरी: पृष्ठ- 158
13. मोहन राकेश की डायरी: पृष्ठ- 227
14. सं. राजेंद्र यादव: हंस (दिसंबर 1995)-पृष्ठ-9
15. सं. राजेंद्र यादव: हंस (दिसंबर 1995)-पृष्ठ-7
16. सं. कमलेश्वर-सारिका (मार्च 1973)–पृष्ठ-64
17. कमलेश्वर: अपनी निगाह में–पृष्ठ-10
18. सं. राजेंद्र यादव: हंस (दिसंबर 1995)-पृष्ठ-10